दो साहसिक कहानियाँ

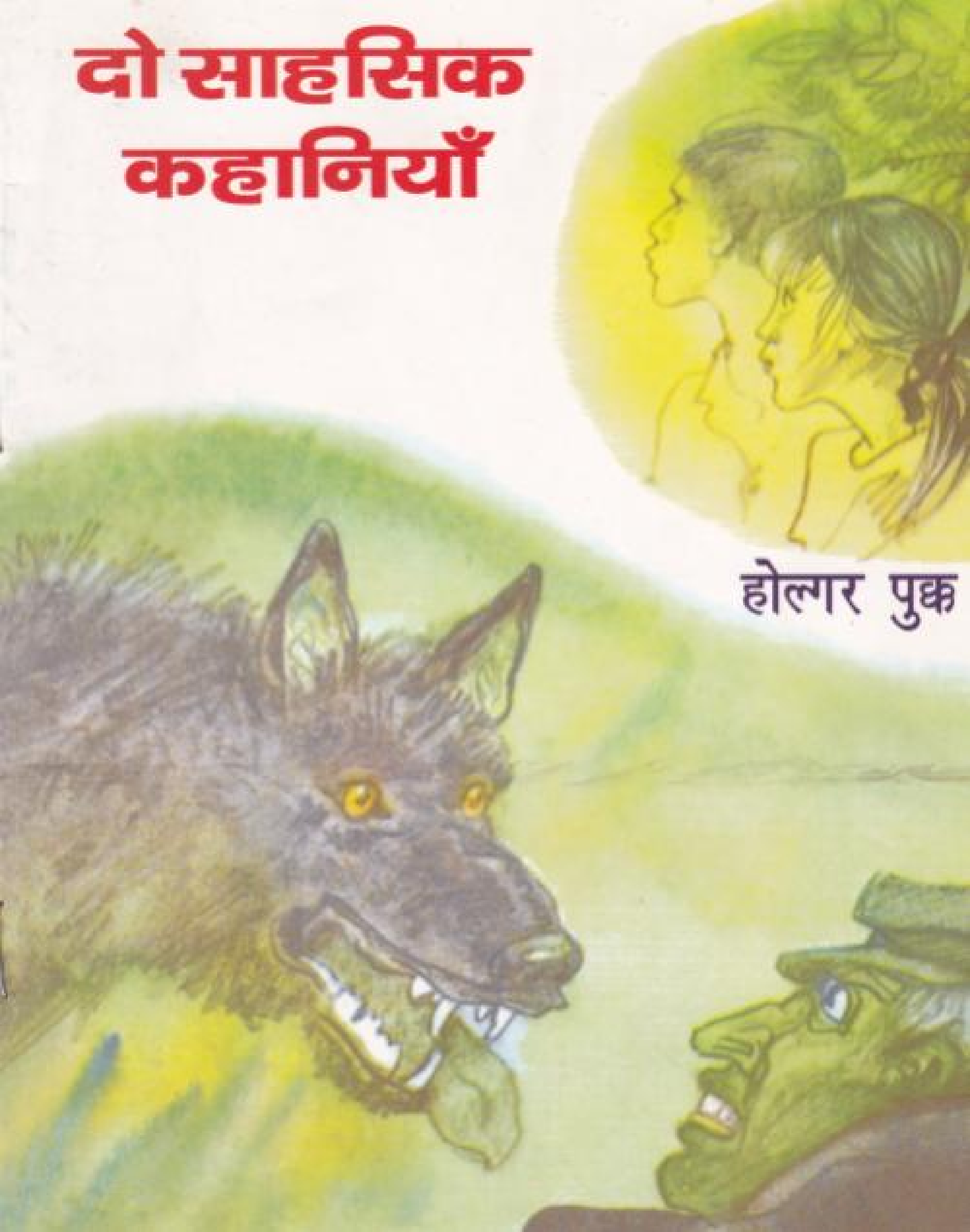

होल्गर पुक

दो साहसिक कहानियाँ

होल्गर पुक

अनुवादक : मीनाक्षी
आवरण एवं रेखांकन : रामबाबू
आज़म

अनुराग ट्रस्ट

सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य : 15 रुपए

पहला हिन्दी संस्करण 2004

पुनर्मुद्रण : जनवरी, 2008

प्रकाशक

अनुराग ट्रस्ट

डी - 68, निरालानगर

लखनऊ - 226020

लेज़र टाइप सेटिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन

मुद्रक : क्रिएटिव प्रिण्टर्स, 628/एस-28, शक्तिनगर, लखनऊ

एक भुतहा सी कहानी

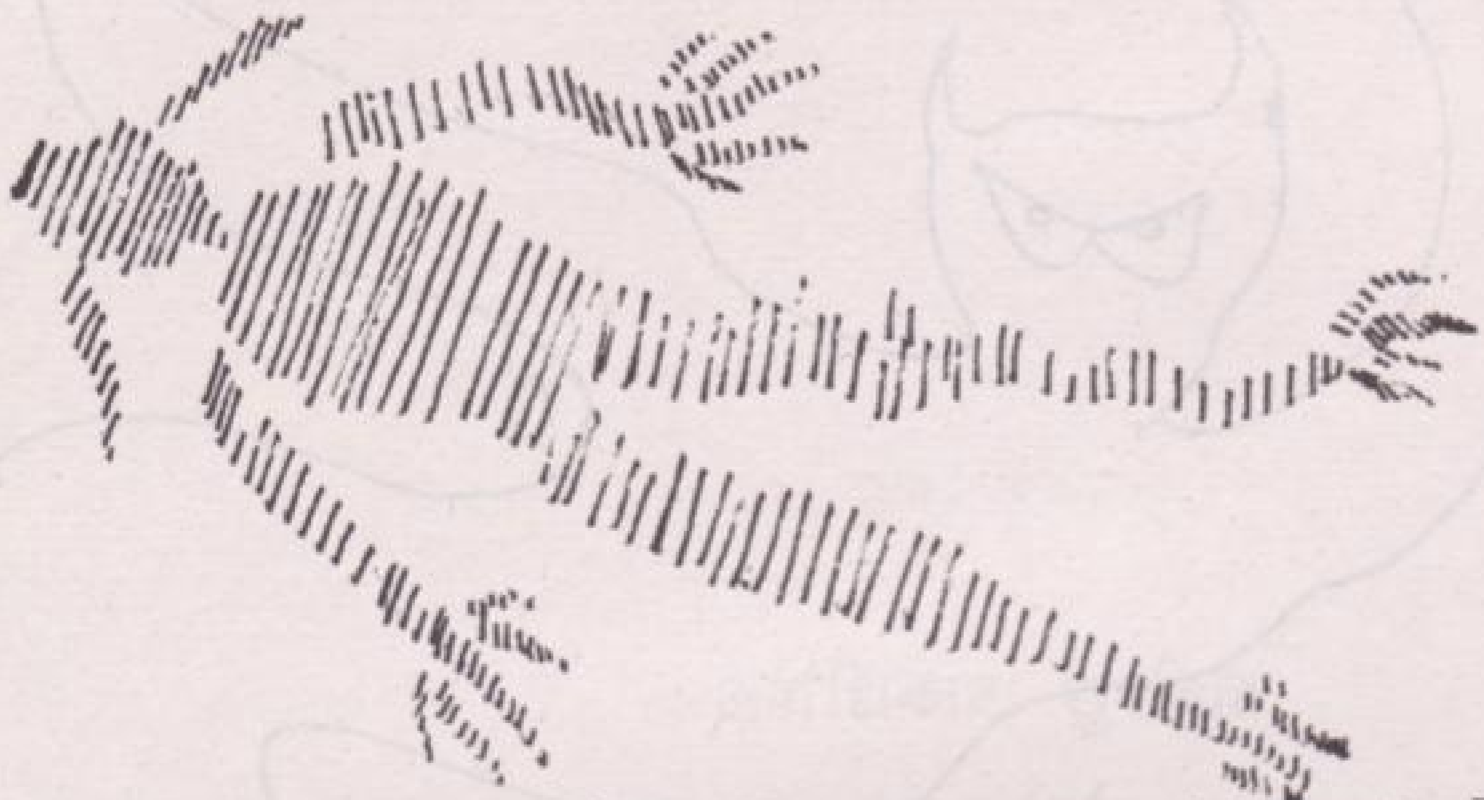

अनन्त और कदम भाई थे। वे एक लम्बा, भद्दे ढंग से फैला हुआ एक मंजिला मकान में रहते थे। उसके एक सिरे पर गाँव की दुकान थी और दूसरे सिरे पर दुकान मालिक का परिवार काबिज था।

एक रात दोनों भाई बैठकखाने में शतरंज खेल रहे थे। उनके पिता ने दुकान में ताला लगा दिया था तथा माँ और वे कस्बे की एक बैठक में चले गये थे।

बाहर ठिठुरन और अँधेरा था लेकिन कमरा खुशनुमा और आरामदेह था। उनका कुत्ता अहाते की चौकसी कर रहा था। हालाँकि सबसे निकट के पड़ोसी की बत्ती दूर जंगल के छोर पर टिमटिमा रही थी, लेकिन डरने जैसी कोई बात न थी।

सब कुछ शान्त और नीरव था। केवल शतरंज की गोटियों से उस समय आवाज़ आती जब लड़के उन्हें विसात पर खिसका रहे होते।

अचानक एक तेज खड़खड़ाहट से यह शान्ति भंग हो गयी। यह इतनी तेज थी कि अनन्त के हाथ से शतरंज की वह गोटी गिर पड़ी जिसे उसने बस उठाया ही था।

कदम की जैसे साँस रुक गयी और बाहर शेरू भूँकने लगा।

लड़कों को हिलने का साहस नहीं हुआ। वे कान लगाकर सुनते रहे लेकिन मकान एक बार फिर इस तरह शान्त हो चुका था जैसे वहाँ कभी कोई तेज खड़खड़ाहट की आवाज हुई ही न हो।

"वहाँ से आयी थी...दुकान में से," अनन्त ने फुसफुसाकर कहा और दरवाजे की ओर बढ़ा। दरवाजे के पीछे, सँकरे से गलियारे को पार कर एक दूसरा दरवाजा था जो दुकान में ले जाता था।

"क्या तुम्हें...क्या तुम्हें लगता है कि उसमें चोर है," कदम ने भी फुसफुसाते हुए कहा। एकदम डरकर उसने अपने भाई की बाँह पकड़ ली।

"अब छोड़ो भी! भला उसमें चोर कैसे घुस सकते हैं?" अनन्त ने उसके सन्देह को चुटकियों में उड़ा दिया। अपने भाई की आवाज और भंगिमा से कदम को अपने पिता की याद हो आयी।

"देखो, अब शेरू ने भी भौंकना बंद कर दिया है," अनन्त ने आश्वस्त किया।

सचमुच ही गुर्राने और भौंकने की आवाज़ थम गयी थी।

"हमें चलकर भी देखना चाहिए कि खड़खड़ाहट की वजह क्या थी।"

"मुझे...नहीं मालूम", कदम हिचकिचा रहा था।

लेकिन तब तक अनन्त उठ चुका था। उसने दरवाजा खींच कर खोला और गलियारे की बत्ती जलायी। गलियारे में कोई नहीं था। तब बैठकखाने से अनन्त कुर्सी उठा लाया और उसे दुकान की ओर खुलने वाले दरवाजे के पीछे लगा दिया। दरवाजे का ऊपरी हिस्सा काँच का बना हुआ था। कुर्सी पर खड़े होकर लड़के किसी तरह वहाँ तक पहुँच पाते थे कि दुकान के अन्दर झाँक सकें।

रात के वक्त पिताजी हमेशा गोदाम में मद्धिम-सी बत्ती जलती छोड़ देते थे जिससे सभी काउण्टर और अल्मारियाँ नजर आ रही थीं।

लड़के बिल्कुल हक्काबक्का होकर घूर रहे थे। बाल्टियों का ढेर लुढ़का पड़ा था। टाइल के फर्श पर चारों ओर बाल्टियाँ बिखरी हुई थीं। और मेज के कोने पर...यह क्या! लड़कों को एक सिर दिखायी दिया। वह काले नेत्र-कोटरों वाला एक खोपड़ी जैसा

नजर आ रहा था....सिर टकटकी लगाकर बाल्टियों की ओर देख रहा था मानों उनकी निगरानी कर रहा हो।

और फिर...हे ईश्वर!

आलमारी में टंगा एक हरा स्वेटर अचानक फुदकने लगा ऊपर-नीचे...। फिर ऊपर और नीचे...और फिर काउण्टर के पीछे जाकर गायब हो गया।

लड़के अवाक से आँख-फाड़े देख रहे थे। इससे पहले कि वे उबर पाते एक और

आश्चर्य उन पर टूट पड़ा।

काउण्टर के पीछे से हरा स्वेटर रेंगते हुए बाहर निकला। बाहें अगल-बगल फैली हुई बीचो-बीच विचित्र ढंग से कूबड़ निकाले, उसने फर्श को पार किया और शराब के क्रेट के बीच गुम हो गया।

फिर कोई चींखा। अनन्त चौंक पड़ा लेकिन वह फौरन पहचान गया कि चींखने वाला उसका भाई था।

"चलो, भाग चलें!" कुर्सी से नीचे उतरते हुए लड़का गला फाड़ कर चिल्लाया।

अपने भाई को शान्त करने में अनन्त को बहुत जतन करना पड़ा।

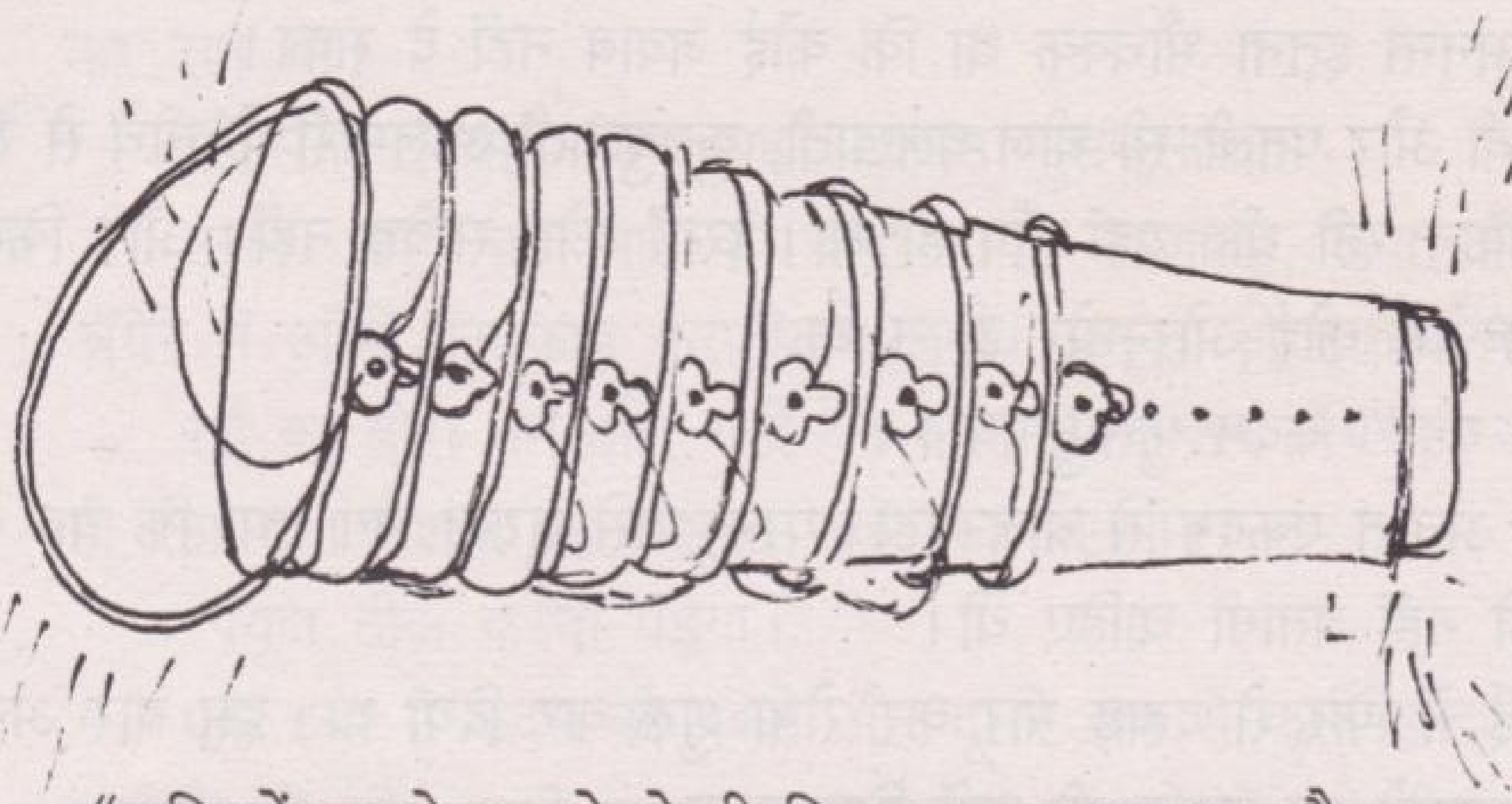

"बाल्टियों का ढेर पहले से ही तिरछा रखा हुआ था और वह बस लुढ़क पड़ा। लेकिन वह सिर...वह महज दफ्ती का एक मुखौटा भर था। आखिरी खाने में बहुत ढेर सारे पड़े हुए थे याद नहीं?"

"लेकिन स्वेटर...वह हरा वाला स्वेटर?" कदम बड़बड़ाने लगा। वह बुरी तरह काँप रहा था।

अनन्त भी हरे स्वेटर वाली उस विचित्र घटना को समझ नहीं पा रहा था। यह पूरा मामला उसके लिए भी भारी पड़ने लगा था और वह चाह रहा था उसके माता-पिता घर लौट आयें। परन्तु वह कदम के सामने अपनी घबराहट प्रकट नहीं करना चाहता था। इसलिए उसने जितना सम्भव हो सका उतने शान्तपूर्ण लहजे में कहा–

"हमें एक बार फिर से देखना चाहिए और पता लगाना चाहिए कि आखिर मामला क्या है।"

"मुझे नहीं देखना है", आँसू भरी आँखों से छोटे भाई ने प्रतिरोध किया।

लेकिन तब तक अनन्त कुर्सी पर चढ़ चुका था। वह कमरे का मुआयना कर ही रहा था कि उन्हें एक धमाका सुनाई पड़ा। यह एक तेज धमाका था और उसके बाद छनाक की आवाज आयी।

"नीचे उतरो, चलो निकल चले!" कदम अपने भाई के पतलून का पाँयचा खींचने लगा।

लेकिन अनन्त इतना भौचक्क था कि कोई जवाब नहीं दे सका।

कोई लम्बी और पतली-सी चीज बलखाती, कुलबुलाती आलमारी के नीचे से रेंगते हुए बाहर निकल रही थी। यह साँप ही था। इसमें कोई सन्देह नहीं। और कितना लम्बा। इसका जैसे कोई ओर-छोर ही न था...

"क्या है यह?" कदम फुसफुसाया।

"साँप", अनन्त एकदम से बोल पड़ा। परन्तु उसे तुरन्त लग गया कि यह बात उसे कदम को नहीं बतानी चाहिए थी।

नन्हें भाई ने फिर से दहाड़ मार कर रोना शुरू कर दिया था। इस बार अनन्त को उसे चुप कराने का समय भी नहीं मिल पाया।

दुकान के सामने वाले दीवार में, लम्बी मेज के पीछे लगा दरवाजा अपने-आप खुल रहा था। अनन्त ने किसी को बाहर जाते या अन्दर आते नहीं देखा। वह द्वार उनके पिता के काम करने वाले कमरे में खुलता था।

अनन्त की एक और अजीब-सी चीज पर नजर पड़ी। पिताजी के कमरे की बत्ती जल रही थी। क्या पापा उसे जलता हुआ छोड़ गये थे? अथवा वह खुद से ही जल उठी थी? आज तो सब कुछ मुमकिन लग रहा था।

अनन्त खुले दरवाजे और उससे आती रौशनी की चमक को आँखें फाड़कर देखता रहा उसने अपना दिल डूबता महसूस किया।

"क्या हुआ?" कदम फुसफुसाया और अपने भाई का पाँयचा खींचने लगा। अनन्त ने चूँकि कोई जवाब नहीं दिया था इसलिए कदम ने फिर से कुर्सी पर चढ़ने का फैसला किया। वह भयभीत तो था लेकिन उत्सुकता के कारण अपने को रोक नहीं पाया।

अचानक घर्घर-की आवाज आयी। और दूसरे ही पल पूरा मकान अँधेरे में डूब गया।

कदम चीखा और अनन्त से लिपट गया। अनन्त का सन्तुलन गड़बड़ा गया और दोनों जमीन पर आ रहे। खुशकिस्मती से किसी को चोट नहीं लगी क्योंकि वे रुई के

उस बोरे पर गिरे जो दीवार के सहारे टिका हुआ था।

"क्या मुसीबत है! बिजली फ्यूज हो गयी!" अनन्त अपने पिता जैसे शब्द इस्तेमाल कर रहा था।

"किसने...किसने किया यह?" कदम फुसफुसाया।

उसने अपने बड़े भाई को दोनों हाथों से जकड़ लिया और सहमा-सहमा-सा अँधेरे में आँखें फाड़फाड़ कर देखने लगा। अनन्त को इसका जवाब नहीं पता था।

रुई का बोरा नर्म और गर्मी देने वाला था लेकिन अँधेरे में उन्हें डरावना महसूस हो रहा था। रौशनी की जरूरत उन्हें फिर से थी।

"फ्यूज ठीक करना पड़ेगा।"

एक हाथ से कदम को पकड़े और दूसरे हाथ से कुर्सी खींचते हुए वह सामने की दरवाजे की ओर बढ़ने लगा। फ्यूज बाक्स दरवाजे से सटे दीवार पर था। बाहर की ओर निकले बटनों को उसने दबा दिया और फिर से बिजली आ गयी।

दुकान के भीतर दुबारा नजर दौड़ाते हुए अनन्त ने देखा कि उसके पिताजी के काम करने वाले कमरे में अँधेरा था। उनके कमरे की बत्ती किसने बुझाई?

"क्या बात है?" कदम ने जानना चाहा।

"आओ और खुद ही देख लो।"

अनन्त को यह नहीं कहना चाहिए था। जैसे ही उसका छोटा भाई कुर्सी पर चढ़ा एक तेज धमाकेदार आवाज हुई और कदम लुढकता हुआ नीचे आ गया।

उस बड़े से शान्त घर में धमाके की आवाज बड़े जोर से गूँज उठी। शेरू ने भी उसे सुना होगा। वह अप्रसन्न होकर भौंक पड़ा।

कदम ने फिर से जोर-जोर से रोना शुरू कर दिया।

"अरे कुछ नहीं होगा! बहादुर बनो," अनन्त ने अपने भाई को दिलासा दिया। वह अब भी कुर्सी पर खड़ा कुछ और घटित होने का इन्तजार करता हुआ गोदाम में देख रहा था। लेकिन कुछ नहीं हुआ।

अनन्त को अचानक एक विचार सूझा—और वह नीचे कूद पड़ा।

"चलो हम शेरू को दुकान के अन्दर भेजते है!" यह एक बढ़िया विचार था लेकिन

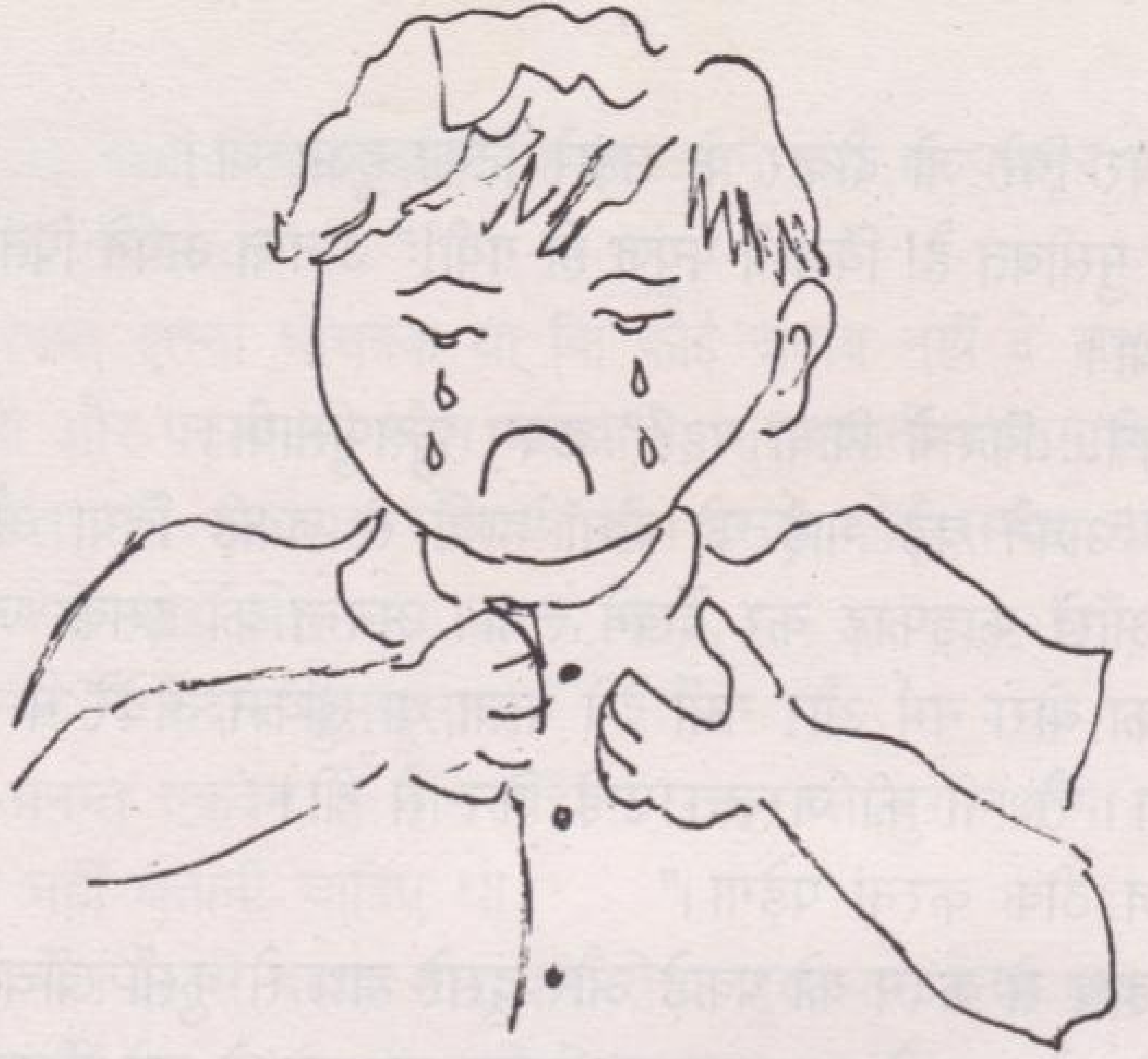

इससे उसके भाई पर फिर से रोने का एक और दौरा पड़ा।

"नहीं...नहीं बाहर मत जाओ। वहाँ अहाते में लुटेरे ...और भूत होंगे।"

"कैसा भूत?"

"दादी अम्मा ने बताया था मुझे एक बार..."

"बकवास..." अनन्त बड़बड़ाया। कुछ ही डग में वह दरवाजे पर था, उसने चाभी घुमायी और सिटकनी खोल दी। एक नम हवा का झोंका उसके चेहरे से टकराया। शेरू अपनी जंजीर खड़खड़ाते हुए अपने दड़बे से बाहर आ गया। उसने खुद को ताना और दुम हिलायी। अहाता रौशनी से भर उठा। दरवाजे के ऊपर एक बड़ा-सा लालटेन था।

अनन्त ने कुत्ते की जंजीर खोल दी और उसे घर के भीतर ले गया। शेरू एक भूरे रंग का विशाल एलशेशियन था।

अनन्त ने फिर से सामने के दरवाजे को झटपट बन्द कर लिया और सिटकनी लगा दी। तब उसने खूँटी से गोदाम की चाभी निकाली और ताले के छेद में से ठीक से बैठा दिया। शेरू खुशी से अपनी दुम हिला रहा था और अनन्त की ऊँगलियाँ चाट रहा था। कदम पीछे हटकर बैठकखाने में चला आया और धड़ाक से दरवाजा बन्द कर दिया।

"मत भेजो!" वह दरवाजे के पीछे से चिल्लाया।

"जो भी वहाँ है वह हमारे शेरू को मार डालेगा। वह उसे मार डालेगा!"

"बकवास।" अनन्त बुदबुदाया "शेरू उतना ही साहसी है जितना कि एक शेर।"

अनन्त ने चाभी घुमायी और दरवाजे को जरा-सा खोला।

"खोजो, शेरू खोजो!" उसने खुली जगह से अपने दोस्त को भीतर ठेला और तुरन्त उसके पीछे दरवाजा बन्द कर लिया। तब उसने कुर्सी को वापस रखा और उस पर चढ़ गया।

उसने देखा कि शेरू बाल्टियों के बीच खड़ा है और हवा को सूँघ रहा है; उसके कान ऊपर की ओर उठे हुए थे, उसके बाल खड़े हो गये थे। तब एक जबरदस्त छलाँग के साथ वह काउण्टर के पीछे जाकर गायब हो गया। अनन्त को उठा-पठक, गुर्राहट और रिरियाने की आवाज सुनाई दी। फिर वहाँ शान्ति छा गयी।

अनन्त ने इतंजार किया। कुछ और घटित नहीं हुआ। अन्त में वह नीचे उतरा और सावधानीपूर्वक दरवाजे को खोला।

"शेरू! यहाँ आओ!" अनन्त ने लड़खड़ाती आवाज में पुकारा। शेरू साहसी था और इसमें गलती की कोई गुंजाइश नहीं थी। वहाँ कोई भूत नहीं था,...यह बात भी बिल्कुल साफ थी...लेकिन वह निकल क्यों नहीं रहा...

अन्त में उसने कुत्ते को दरवाजे की तरफ बढ़ते हुए सुना।

जैसे ही शेरू ने गलियारे में अपनी नाक बढ़ायी। अनन्त डरकर पीछे हट गया।

कुत्ते ने मुँह में कुछ उठा रखा था। वह कोई रोयेंदार-सी चीज थी। उसके चार पैर और बटन की तरह चमकाती हुई दो आँखें थीं।

शेरू ने गठरी को कोमलता से फर्श पर रख दिया और प्रशंसा सुनने की आशा में अपनी दुम हिलाने लगा।

और तभी जाकर अनन्त उस रोयेंदार जीव को पहचान पाया वह मुक्कू था, श्रीमती नुशरत का पिल्ला।

पिताजी की मदद से सारी बातें बिल्कुल साफ हो गयीं। बन्द होने से पहले श्रीमती नुशरत आखिरी ग्राहक थी। मुक्कू बिना किसी की नजर पड़े, दुकान में इधर-उधर

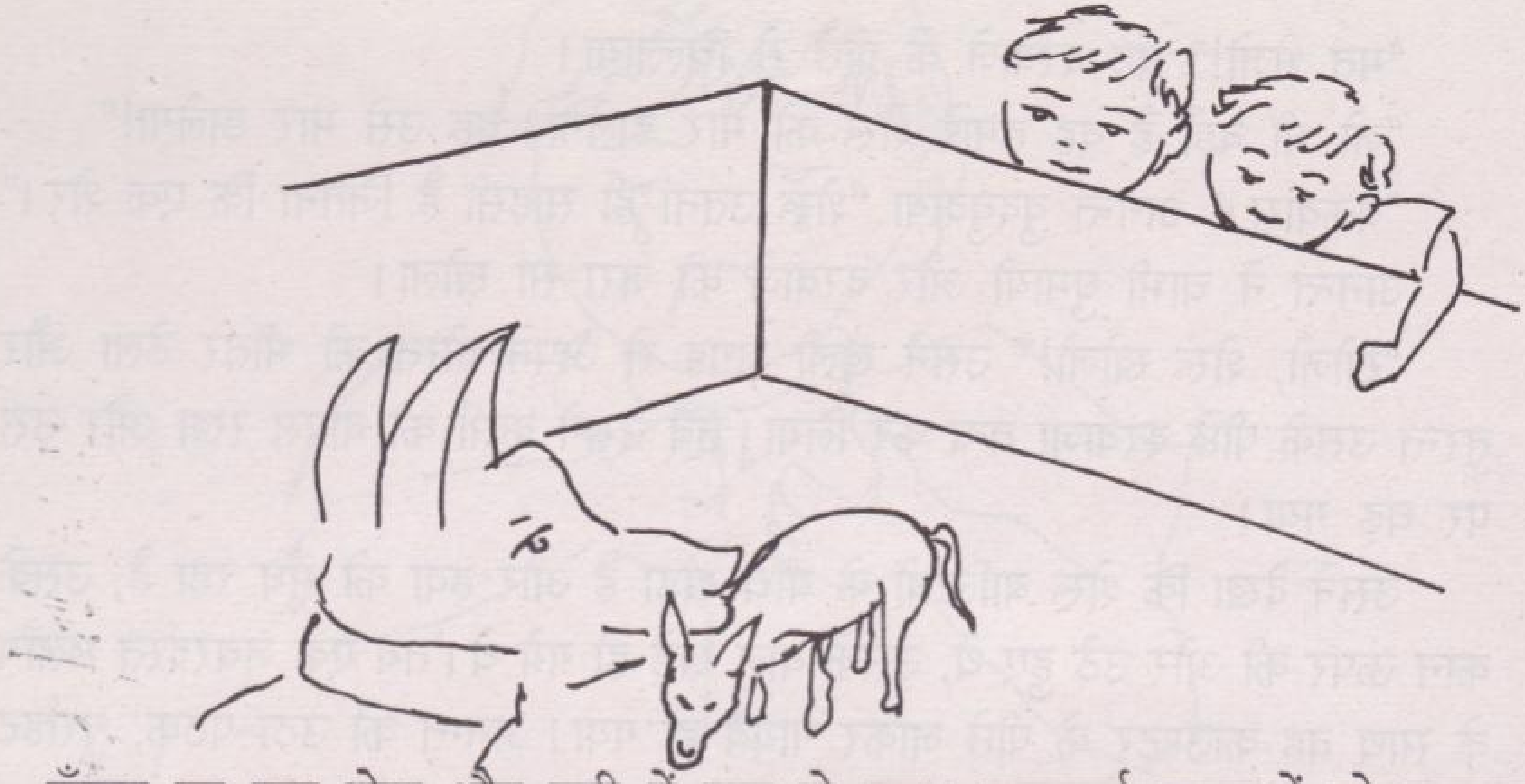

सूँघता रह गया होगा और उसी में बन्द हो गया। रहस्यपूर्ण घटनाओं को समझना आसान था। जाहिरा तौर पर पहले मुक्कू ने एक..नींद मारी। तब उसने मस्ती में उछल-कूद मचाना शुरू किया। उसने तार खींच कर कार्यालय कक्ष का टेबुल लैम्प गिरा दिया, अलमारी से रस का मर्तबान पटक दिया, एक गुब्बारे को फोड़ा और हरे स्वेटर के साथ तब तक खींचा-तानी करता रहा जब तक कि वह गिरकर उसके ऊपर नहीं आ पड़ा।

"कितने अफसोस की बात है कि वह केवल मुक्कू निकला", कदम रात को खाने की मेज पर लम्बी साँस भरते हुए बोला, "वह एक अच्छी-भली भुतहा कहानी हो सकती थी..."

"तुम एक वैसे भी सुना सकते हो," अनन्त ने कहा।

और दूसरे दिन पूरा का पूरा पहला दर्जा दुकान के भीतर के उस डरावने भूत के बारे में फुसफुसा रहा था जो दुकान मालिक के परिवार में किसी को भी डरा नहीं पाया था।

जंगल के बीच वह बंगला

गार्मियों के आखिरी दिन थे। मीना, अभय और अरुण कुकरमुत्तों की तलाश में जंगल की ओर चल दिये। उन्होंने एक लम्बा ठूंठदार खेत पार किया फिर दूर तक फैले हुए चरागाह से गुजरे और जल्दी ही जंगल के किनारे जा पहुँचे। घूमने के लिहाज से वह एक खूबसूरत जगह थी, दिक्कत बस यह हुई कि उन्हें वहाँ अधिक कुकरमुत्ते नहीं मिल पाये।

इधर-उधर घूमने-टहलने और एक-दूसरे पर चीड़-शंकु फेंकने के चक्कर में ऊपर आकाश में उठते घनघोर काले बादलों को वे बिल्कुल देख ही नहीं पाये। अचानक झमड़ कर बारिश होने लगी।

बच्चों ने देवदारु के पेड़ तले शरण ली लेकिन जल्दी ही उसकी टहनियों के बीच से पानी टपकने लगा।

"चलो हम भागकर कामताप्रसाद जी के बॅंगले में चलते हैं," मीना बोल पड़ी।

"वहाँ जाने से कोई फायदा नहीं, मुझे पता है वे वहाँ नहीं हैं," अरुण ने कहा। "पिताजी ने उन्हें अपनी बन्दूक और कैमरे के साथ बाहर जाते देखा था और उनका कुत्ता मोती उनके पीछे-पीछे था।"

"फिर भी हम उनके बरामदे में तो जा ही सकते हैं," अभय ने बहस की।

बात तो पते की थी।

बच्चे उस तरफ लपके।

कामताप्रसाद जी ने जँगल के बीच एक पुराना बँगला ले रखा था और जब भी वे अपने को शहर से अलग कर पाते अपनी कार से यहाँ चले आते। वे घास के मैदान और झील की चित्रकारी किया करते, कभी न अलग होने वाली अपनी बन्दूक और कैमरे के साथ जंगल में भटकते फिरते और अक्सर पीछे वाले बाग में खाक छानते दिखायी दे जाते थे। किसी ने भी कभी उन्हें बन्दूक चलाते नहीं सुना था लेकिन बहुतों ने उनकी प्राकृतिक दृश्य की तस्वीरें देखी थीं।

बच्चे भागकर बरामदे में आ गये।

"देखो, कामताप्रसाद जी घर पर हैं!" बरामदे के फर्श पर मिट्टी लगे बड़े पैरों के निशान दिखाते हुए मींना बोल उठी।

अभय ने दरवाजा खटखटाया। कामताप्रसाद जी को अतिथियों का स्वागत करके हमेशा खुशी होती थी।

यद्यपि कोई जवाब नहीं मिला था, फिर भी बिना किसी झिझक के अभय ने दरवाजे का हैन्डिल घुमाया। एक बार कामताप्रसाद जी ने कहा था,

"खटखटाने की क्या जरूरत? दरवाजा बना ही इसलिये होता है। बस सीधे अन्दर चले आओ!"

बच्चों ने अपने आप को पत्थर के फर्श वाले रसोईघर में पाया जिसके एक कोने में एक भारी-सा स्टोव पड़ा था।

"कामताप्रसाद जी!" मीना ने पुकारा।

कोई उत्तर नहीं।

बच्चों ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि वह दरवाजा जो बगल की खत्ती में खुलता था कुछ इंच भर खुला। छज्जेदार टोपी के नीचे से एक आँख उन्हें देख रही थी। फिर दरवाजा एक चरमराहट के साथ पूरी तरह खुल गया। एक रूखी आवाज ने पूछा,

"तुम लोग यहाँ क्यों डोलते फिर रहे हो?"

बच्चे चौंक पड़े।

एक लम्बा-सा आदमी उनके सामने खड़ा था। उसने काली बरसाती पहन रखी थी और अपने हाथ में उसने चाभियों का गुच्छा पकड़ा हुआ था।

वह कामताप्रसाद नहीं था। वह बिल्कुल अजनबी था।

"नमस्ते!" मीना ने कहा।

"मैंने कहा नहीं था कि यहाँ मत आओ?" अरुण बुदबुदाया।

लेकिन अभय ने दृढ़ स्वर में पूछा,

"क्या कामताप्रसाद जी अन्दर हैं?"

"नहीं, यहाँ कोई नहीं है..." अजनबी धीरे से बोला।

"मैंने तुमसे कहा नहीं था..." अरुण बोला, और चलने के लिए तैयार हो गया।

"जब तक बारिश बन्द नहीं हो जाती तब तक के लिए क्या हम यहाँ ठहर सकते हैं?" मीना ने मीठी आवाज में पूछा।

"ठीक है,... बरामदे में रुक जाओ," उस आदमी ने ऐसी मुद्रा बनायी मानो वह उनसे पूरी तरह छुटकारा पाना चाहता हो।

अरुण फौरन आज्ञाकारी ढंग से बाहर खिसक आया। अभय भी दुबकते हुए दरवाजे की ओर बढ़ा। लेकिन मीना पूछ बैठी,

"क्या आप कामताप्रसाद जी का इंतजार कर रहे हैं?"

जवाब देने में देर लगी, जैसे कि उस व्यक्ति को शब्द न मिल रहे हों।

"हाँ, एक तरीके से, मैं, उनकी कार की मरम्मत कर रहा हूँ," वह आदमी खत्ती में खुलने वाले दरवाजे की ओर मुड़ा, जहाँ कामताप्रसाद चाचा अपनी हल्के भूरे रंग की फियेट रखते थे।

अभय ने अपने कान खड़े कर लिए। गाड़ी की मरम्मत करना तो बिल्कुल उसके

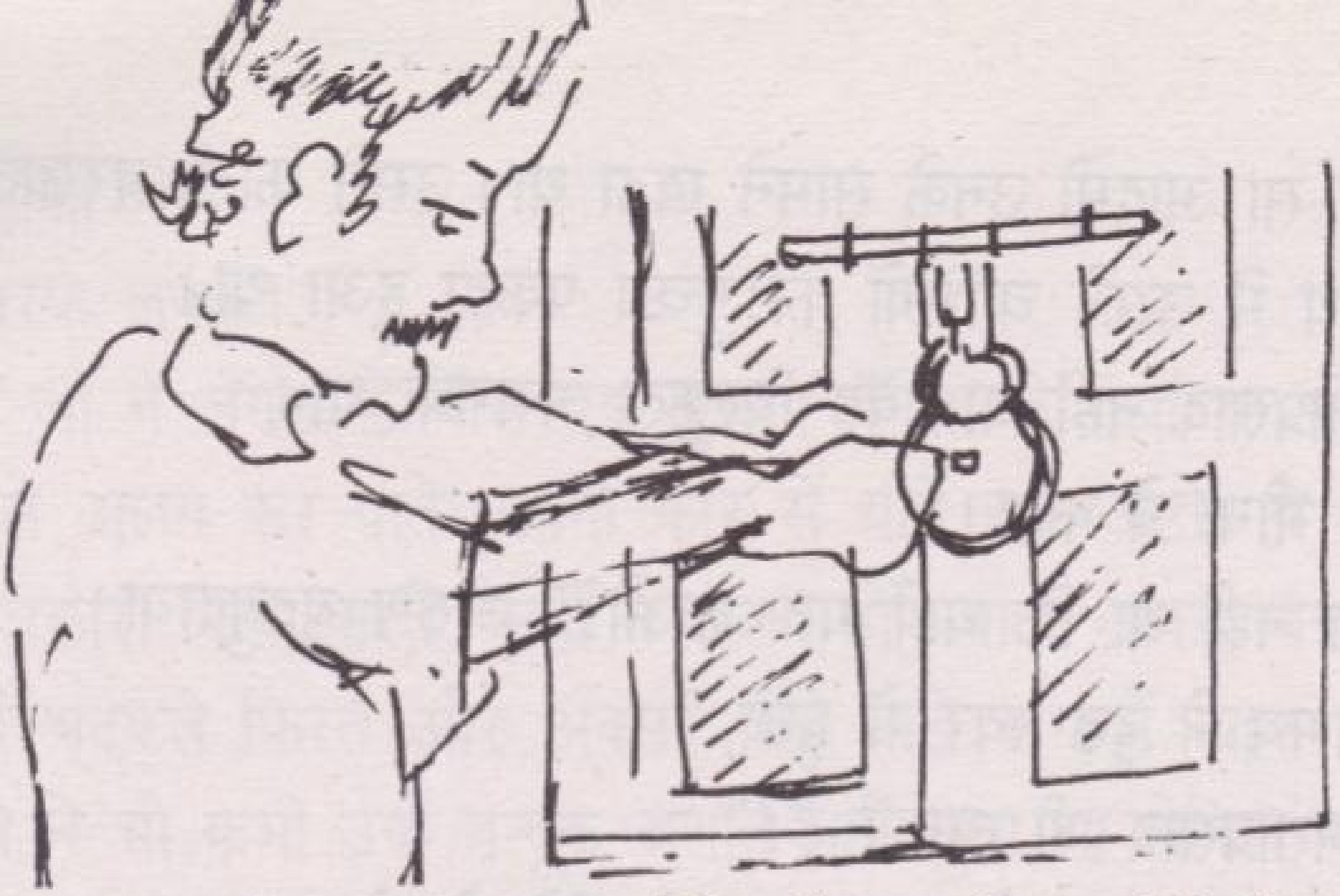

मन लायक काम था। इंजन में अपनी नाक घुसेड़े और गाड़ी के नीचे रेंगकर कितने ही घंटे उसने और उसके पिता ने अपने घर वाली मारुति की मरम्मत करने में लगाया है।

"इसमें क्या गड़बड़ी आ गयी है," अभय ने उत्सुक होकर पूछा, और कुछ कदम नजदीक पहुँचकर उसने जानकार की तरह सवाल किया, "क्या इग्नीशन (ignition) में दिक्कत है? हम आकर, तुम्हें इसको बनाते हुए देखेंगे! ठीक है न?"

"मुझे यहाँ किसी की जरूरत नहीं है," अजनबी भुनभुनाया। "मैंने तुमसे कहा न कि बाहर ठहरो! या फिर, चलते बनो!"

आदमी जाने के लिए वापस मुड़ा। लेकिन वह दरवाजा बन्द नहीं कर पाया। अभय दरवाजे में खड़ा था और मीना ठीक उसके पीछे। मीना हर चीज में हमेशा नाक घुसेड़ती।

"चलो भागो!" अजनबी गुर्राया! उसने अभय और मीना की बाँह पकड़ी और उन्हें खींचते हुए फर्श को पार किया, बैठक के दरवाजे को लात मार कर खोला और बच्चों को अन्दर ढकेल दिया।

"क्या ....क्या कर रहे हो तुम? तुम्हें कोई हक नहीं है कि..." अरुण ने प्रतिवाद किया।

"तुम भी अन्दर चलो जल्दी!" वह अरुण पर चिल्लाया।

आज्ञाकारी ढंग से, लड़के ने हड़बड़ाते हुए रसोईघर पार किया और दूसरों के साथ शामिल हो गया।

उस आदमी ने दरवाजा बन्द किया और चाभी घुमा दी।

कुछ देर तक तो बच्चे बिल्कुल चकराये हुए से एक दूसरे को देखते रहे। उनकी

बोलती बन्द थी।

अरुण ने तब कहा, "हमें उस पर टूट पड़ना चाहिए था, हम सभी को एक साथ।"

"उस पर टूट पड़ना चाहिए था," अभय ने मुँह चिढ़ाया।

"तुम क्यों चले आये यहाँ हमारे पीछे-पीछे? एक भेड़ की तरह! क्यों नहीं गाँव से मदद लेने के लिए भाग पड़े?"

"पर... वह मुझ पर गोली चला सकता था," अरुण ने विषय बदल दिया।

मीना ने उसे टोका। उसने कमरे का मुआयना कर लिया था और जानकारी दे रही थी,

"हम बाहर नहीं निकल सकते। खिड़कियाँ कसकर बन्द की गई हैं।"

अचानक अभय कपड़े के लिए बनाई गई आलमारी के सामने थम गया। वह दो दिवारों के बीच एक बड़ा-सा खाना था जो जमीन से छत तक पहुँच रहा था।

सावधानीपूर्वक, अभय ने बीच वाला दरवाजा खोला। अन्दर हैंगरों पर कपड़े टगें थे; कोट था, सूट था ये कामताप्रसाद जी की पत्नी के कपड़े थे।

अपने साथियों की ताज्जुबभरी निगाहों के सामने अभय ने कपड़ों को एक किनारे सरकाया और आलमारी में घुसकर उनके पीछे एक छण के लिए गायब हो गया। कुछ देर बाद उसका सिर दो गाउन के बीच से फिर नामूदार हुआ और उसने मीना व अरुण को अपने पीछे आने का इशारा किया।

लगता था कि कपड़ों के पीछे एक और दरवाजा था जो बगल वाले कमरे में खुलता था। कपड़ों के लिए बनाई गई वह बड़ी-सी आलमारी दो कमरों के बीच दीवार का काम करती थी जिसके दरवाजे दोनों कमरों में खुलते थे।

"तुम्हें कैसे इसका पता चला?"

"अरे वह, उसे तो मैंने एकबार तब देखा था जब कामताप्रसाद जी ने आलमारी का दरवाजा खोला था। अचानक मुझे उसकी याद आ गयी थी।"

"हम अभी चलते हैं और उसको मजा चखाते हैं..." अरुण साहस का दिखावा करते हुए फुसफुसाया।

पर असल बात तो यह थी कि वह बैठक में ही ठहरना चाहता था बन्द और

सुरक्षित। नये खतरों का विचारमात्र ही उसे डरा देता था। लेकिन दूसरों को इसकी भनक नहीं लगनी चाहिए...

लेकिन अभय ने कहा, "अब हम यहाँ से खिसक लेंगे और भागकर घर पहुँचेंगे। हमें दूसरों को बता देना चाहिए कि यहाँ एक संदिग्ध..."

वह अपनी बात समाप्त न कर सका। अजनबी ने इंजन चालू कर दिया था।

पलभर में अभय रसोईघर में जा पहुँचा और अधखुले दरवाजे से गैराज में झाँकने लगा।

गैराज के दरवाजे पर वह आदमी कुछ कर रहा था। दरवाजे में एक ठोस लोहे का छड़ फँसा था और ताला एक तरफ झूल रहा था। आदमी ताला तोड़ने में लगा हुआ था।

अभय खिसककर गैराज में आ गया। मीना दहलीज पर दुबकी रही। वह यह देखने के लिए मरी जा रही थी कि अभय कार के पीछे क्या कर रहा है। परन्तु इस दफा उसकी हिम्मत जवाब दे गयी। अजनबी किसी भी छण पीछे पलट सकता था।

और वह पीछे पलटा भी लेकिन गैराज का दरवाजा खोल लेने के बाद ही।

मीना झिझकी और चौखट के पीछे सिमट गयी। अरुण उसके पीछे दुबका रहा और बुदबुदाया, "अगर हम उस पर हमला कर दें तो, हम तीनों के तीनों...."

वह व्यक्ति चक्के के सामने बैठ गया और गाड़ी अपने पीछे धुएँ की नीली लकीर छोड़ती हिचकोले के साथ गैराज से बाहर निकल गयी।

"अभय कहाँ है?" मीना ने एकदम चौंक कर अपना सिर उठाया।

अभय बाल्टियों और पीपों के पीछे से जगह बनाते हुए बस निकल ही रहा था, सर से पाँव तक खुशी से दमकता।

"वह आदमी ज्यादा दूर तक जा नहीं पायेगा?"

उसने थोड़ी शेखी बघारते हुए कहा। परन्तु फौरन यह भी जोड़ दिया।

"चलो अब जितनी जल्दी हो सके भाग कर घर पहुँचें और दूसरों को इसके बारे में बता दें।"

कुछ परामर्श देने के लिए अरुण ने भी अपना मुँह खोला लेकिन किसी के पास उसे सुनने का समय नहीं था।

हल्की फुहार पर ध्यान दिये बिना बच्चों ने भीगे मैदान को पार किया।

"वहाँ तुमने ... क्या किया था," मीना ने हाँफते हुए पूछा।

"हम लोगों को... उस पर टूट पड़ना चाहिए था," अरुण दम लेते हुए बोला।

अभय ने कुछ नहीं कहा वह भागता रहा।

मैदान के दूसरे सिरे पर बच्चे एक आदमी से लगभग टकराते-टकराते बचे वह बन्दूक और कैमरे के साथ था। और ठीक उसके पीछे चल रहा था एक बड़ा सा, शानदार एलशेशियन।

"कामता चाचा... आप की फिएट... एक अजनबी था वहाँ ... मैंने दो टायरों के वाल्ब खोल दिये हैं... वह ज्यादा दूर नहीं जा सकता... जल्दी ही टायर पिचक जायेंगे. .. अभय ने एक साँस में पूरी बात बता दी।"

कामता प्रसाद जी ने आश्चर्य का कोई भाव नहीं दिखाया और न ही सवाल पूछने में कोई वक्त जाया किया। वह घर की तरफ लौट पड़े।

अब पाँचों दौड़ रहे थे। टपकती देवदार की शाखाएँ उनके कालर-पट्टियों पर बौछार कर रही थी। उनके पाँव घुटनों तक भीगे हुए थे।

अरुण पल भर को दम लेने के लिए रुका लेकिन पीछे छूट जाने के डर से फिर

दौड़ने लगा। "मैं कह रहा था कि वहाँ मत चलो... और अब... पागल की तरह भागना पड़ रहा है..." वह गुस्से से मुँह ही मुँह में बड़बड़ाने लगा।

जल्दी ही वे जंगल की बलखाती पगडंडी पर पहुँच गये। वर्षा से भीगे जमीन पर टायर के निशान साफ नजर आ रहे थे।

पीछा जारी रहा। कीचड़ और छोटी गढ़इयों से गुजरते उनके पाँव फचर-फचर, छपर-छपर कर रहे थे।

और आखिरकार वह दिखायी दे गयी। हल्के भूरे रंग वाली गाड़ी दूसरे मोड़ के आड़ में खड़ी थी। कार की बगल में काला रेनकोट पहने वह आदमी टायरों में हवा भर रहा था।

"हुश! मोती!" कामताप्रसाद जी अपने कुत्ते से फुसफुसाये। तब बच्चों से उन्होंने रुकने का इशारा किया और अपने कुत्ते को साथ लिए हुए नये देवदार वृक्षों के झुरमुट में गुम हो गये।

कामताप्रसाद जी और उनका कुत्ता अत्यन्त सतर्कतापूर्वक उस आदमी की ओर बढ़ने लगे और जल्दी ही वे उसके ठीक पीछे जाकर रुक गये।

"तुम्हारी कोहनियाँ और शक्तिशाली बनें!" कामताप्रसाद जी ने अभिवादन किया।

अजनबी झटके से मुड़ा। डर से उसके हाथ से पम्प छूट गया। उसके सामने थी कामताप्रसाद जी की तनी बन्दूक की नाल और दाँत निकाले गुर्राता एलशेशियन।

"मेरी गाड़ी के कारण इतना कुछ कष्ट झेलने की क्या जरूरत थी भला?" कामताप्रसाद जी दोस्ताना अन्दाज में इस तरह मुस्कुराते हुए बोले मानो वह अजनबी उनका बड़ा ही गहरा मित्र हो। "लाइये मुझे इस काम को पूरा करने दीजिए। आप थोड़ा किनारे हटने की मेहरबानी करें।"

अजनबी बिल्कुल सन्न रह गया था। आज्ञाकारी ढंग से डगमगाते कदमों के साथ वह एक ओर हट गया। कामताप्रसाद जी ने आदेश दिया।

"मोती! नजर रखना।"

और टायरों में हवा भरने के लिए आगे बढ़ गये। उस आदमी ने सोचा कि भाग निकलने का यही सबसे अच्छा मौका है। लेकिन उसके पहली हरकत करते ही मोती ने

अपने दाँत फाड़ दिये और ऐसे खतरनाक ढंग से गुर्राने लगा कि कैदी अपनी आँख उठाने की फिर हिम्मत नहीं कर पाया।

हवा भर चुकने के बाद कामता प्रसाद जी ने उस आदमी के बैठने के लिए पिछला दरवाजा खोल दिया।

"कृपया अन्दर चलिए।"

"क्या तुम मुझे बेवकूफ समझते हो?" वह गुर्राया।

"तो आप हमसे उलझने की कोशिश कर रहे हैं," कामताप्रसाद जी मुस्कुराये, "हमारे लिए यह कोई दिक्कत ही नहीं है।"

"मोती, झपट पड़ो!"

मोती ने अजनबी के जाँघ पर फौरन झपट्टा मारा। बस बाल भर चूक गया...

मोती अपना काम जानता था। उसे इस तरह का 'झपट पड़ना' सिखाया गया था जिसका आशय सिर्फ डराना होता था।

पर अजनबी को काफी सबक मिल चुका था। किसी प्रकार का और कोई प्रतिवाद किये बिना वह जैसे-तैसे कार में घुस गया। उसके पीछे मोती ने कार में छलाँग मारी और उसकी बगल में आसन जमा कर बैठ गया।

"मैं आपको सलाह दूँगा कि आप उचित ढंग से व्यवहार करें" कामताप्रसाद जी ने कहा। "मोती को अचानक की गई हरकतें रास नहीं आतीं।"

कामताप्रसाद जी चक्के के पीछे बैठे और तीनों के तीनों बच्चे उनकी बगल में, जैसे-तैसे घुसड़कर सामने वाली सीट पर बैठ गये।

वे गाँव की तरफ चल दिये जहाँ कि पुलिस चौकी (मिलिशिया स्टेशन) सबसे निकट पड़ती थी।

" तुम्हें कैसे वाल्व खोलने का ख्याल आया, अभय," कामताप्रसाद जी जानने को उत्सुक थे।

"अरे वह, कुछ बदमाशों ने हमारी गाड़ी के साथ यही चालबाजी की थी," अभय ने समझाया।

पीछे से बुरी तरह से कोसने की आवाज आयी, कामताप्रसाद जी पीछे मुड़े।

"अपनी खोपड़ी में सभ्य जुबान रखो! मोती को गुस्सा आ सकता है। उसे गाली-गलौज की भाषा सुनने की आदत नहीं, और ख्याल रहे एक युवा भद्र महिला हमारे बीच में है।"

और जवाब में सुनायी दी मीना की खिलखिलाहट।

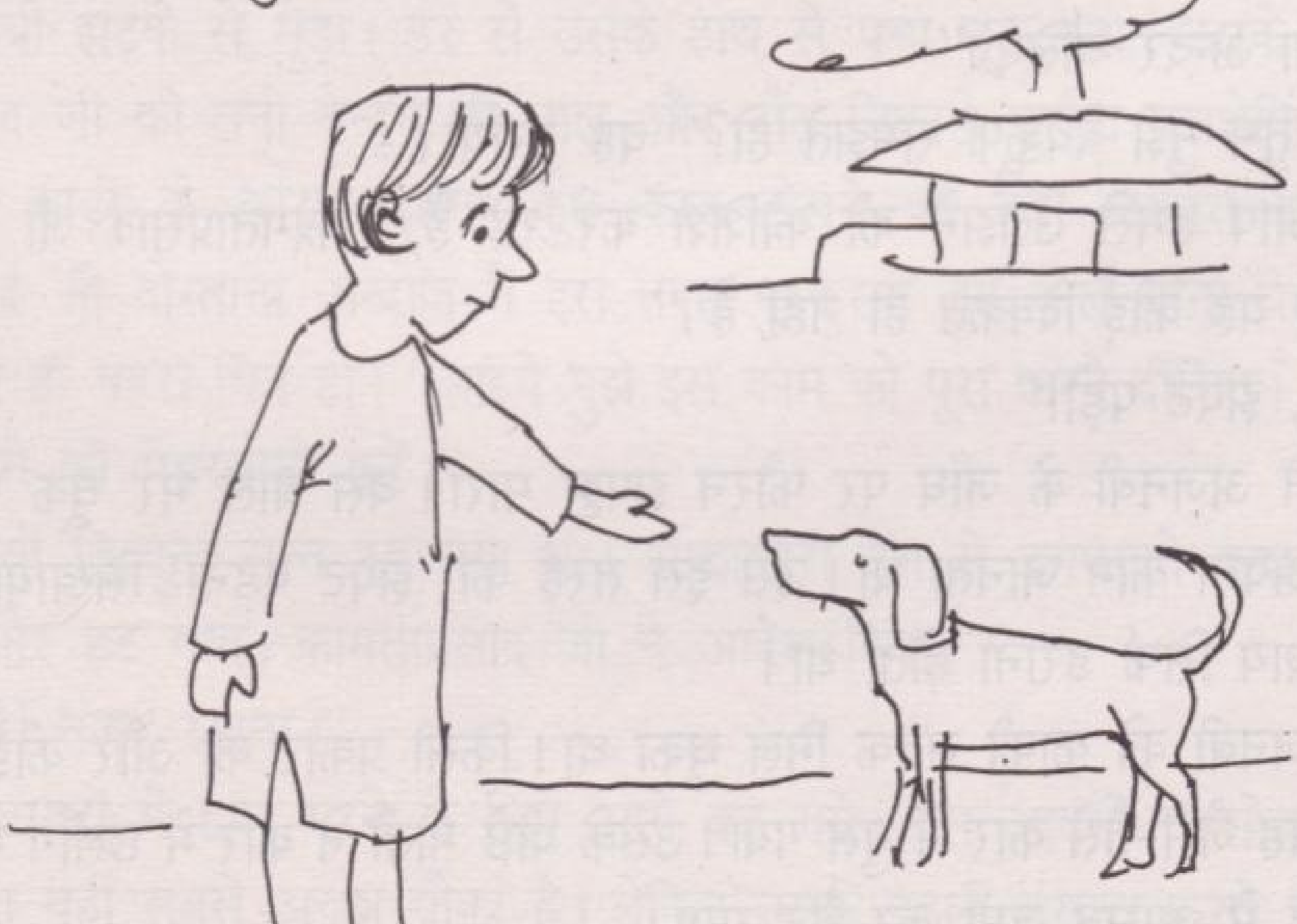

अनुराग ट्रस्ट